Sarvajanik Karyakram

Date	:	4th December 1984
Place	:	Pune
Type	:	Public Program
Speech Language	:	Hindi

CONTENTS

I Transcript

Hindi	02 - 14
English	-
Marathi	-

II Translation

English	-
Hindi	-
Marathi	-

ORIGINAL TRANSCRIPT

HINDI TALK

सत्य को खोजने वाले सर्व आत्माओं को मेरा प्रणिपात!

आज मैं सोच रही थी कि कौन सी भाषा में आप से वार्तालाप किया जाय? यही सोचा की मराठी में, पूना में बहुत बार भाषण हुआ था। आज हिंदी में ही भाषण दिया जाय। क्योंकि हिंदी हमारी राष्ट्रभाषा है और मेरी मातृभाषा मराठी है किंतु हिंदी भाषा सीखना मैं सोचती हूँ परम आवश्यक है और इसलिये आप लोग, मराठी प्रेमी लोग मुझे उदार अंत:करण से क्षमा करें और हिंदी बोलने वाले लोग, जो साहित्यिक हैं, वो भी मुझे क्षमा करें अगर कोई त्रुटियाँ हो जायें तो! किंतु सब से पहले जान लेना चाहिये, कि भाषा तो हृदय की होनी चाहिये। जहाँ भाषा हृदय से न होते हुये शब्दजाल होती है, तब हर तरह के जंजाल खडे हो जाते हैं। इसलिये कोई भाषा जो हृदय से निकलती है, वही मार्मिक होती है। इसी का असर भी होता है।

हम लोग सत्य को खोज रहे हैं अनेक वर्षों से। आज ही की ये बात नहीं है, अनेक वर्षों से हम सत्य को खोज रहे हैं। और उसकी खोज होते होते काफ़ी लोग भटक भी गये हैं। इसका कारण हमें समझ लेना चाहिये, क्योंकि आज की जो स्थिति है, आज का जो माहौल है, वातावरण है, उस वातावरण में ये समझ में नहीं आता है, कि सब लोग परमात्मा की बात करते हैं, धर्म की बात करते हैं और उस पे इतना झगड़ा, इतनी आफ़त और इतना तमाशा क्यों खड़ा करते हैं? ये प्रश्न हमारे जो तरुण (जवान) पीढ़ी के जो लोग हैं उनके सामने आता है और वो लोग ये पूछते हैं बार बार कि, 'माँ, इसका क्या मतलब है? अगर ये परमात्मा सच्चाई है, परमात्मा अगर ये प्रेम है और परमात्मा अगर कृपा है, तो ये सब लगते नहीं की इनपे परमात्मा की कृपा है या इनपे कोई परमात्मा का ....है। तो ऐसे परमात्मा से अच्छा है, कि भूल ही जायें उसको जिसने इतनी आफ़त मचा रखी है।' इस प्रकार आप देख रहे हैं कि बड़ा जंग हमारे तरुण लोगों में, हमारे जवान लोगों में खड़ा हो रहा है। ये जो परमात्मा, परमात्मा की बात है, इसे किस तरह से माना जायें? चाहे आप माने या न मानें, परमात्मा हैं! ये मानने न मानने की बात नहीं है, जो अस्तित्व है वो रहेगा, चाहे आप मानें या न मानें।

लेकिन ऐसी क्या बात हो गयी कि जिनकी वजह से मनुष्य ऐसे गलत रास्तों पे चला जाता है, जहाँ परमात्मा खोजने से भी नहीं मिलता। ये समझने की हम कोशिश करें, कि कहाँ हमारी गलती हो गयी, तो ये हमें दिखायी देगी। सहजयोग जो है, सहज, 'सह' माने आपके साथ, 'ज' माने जन्मा हुआ। जो आपके साथ जन्मा हुआ योग का कार्यक्रम है, जो आपके लिये योग की ....., इतना ही नहीं एक आपके लिये आश्वासन है, वो सिद्ध करने का अब समय आ गया है। सहजयोग ये कोई आज का काम नहीं। हजारो वर्ष पहले भी इंद्र को आत्मसाक्षात्कार दिया गया था। आत्मज्ञान दिया गया था। तब भी सहजयोग था। उसके बाद भी आपने देखा है कि मार्कंडेय स्वामी ने जो कि चौदह हजार वर्ष पूर्व इस संसार में आये थें। उन्होंने भी सहज की महती बतायी। लेकिन ये बात बहुत खोल कर के कही नहीं गयी। उसके बाद, बहुत सालों बाद, बहुत बहुत सालों बाद, हम कह सकते हैं कि इसको खोल कर

पहले ही आदि शंकराचार्य ने सर्व समाज के सामने रखा। तो भी ये नहीं कहा गया कि ये चीज़ होती कैसे? पूरी तरह से बात कही नहीं। क्योंकि वो.....। कृष्ण ने भी कहा, आपको आत्मा को जान लेना चाहिये। जिसने आत्मा को जाना वही समझ सकता है। क्राइस्ट ने भी यही कहा, आपका पुनर्जन्म होना चाहिये। बुद्ध ने कहा, महावीर ने कहा, सब ने ये कहा कि आपका पुनर्जन्म होना चाहिये। लेकिन इस बात को खोल कर के आदि शंकराचार्य ने बताया कि इसके सिवाय कोई और इलाज आपका नहीं। जब तक आपके अन्दर से चैतन्य की सौंदर्य लहरियाँ नहीं बहेंगी, तब तक 'सलिलं, सलिलं' उन्होंने कहा था। तब तक ये शब्दजाल छूट नहीं सकता। लेकिन सब से ज्यादा मैं कहूँगी, कि नानक साहब और कबीर दास है। इन लोगों ने तो पूरी तरह से कोशिश कर के और जो सत्य है उसे सामने रखा, कि कुण्डलिनी के जागरण के सिवाय कोई भी कार्य सिद्ध नहीं हो सकता। लेकिन उनके बोलने का ढ़ंग इतना जबरदस्त और इतना जोर का था, कि लोग उसे समझ नहीं पाये। और यही बात मैंने महसूस की, कि दुनिया में जब तक आप लोगों को आत्मज्ञान नहीं देंगे, उसकी बातचीत करना बड़ा बेकार हो जायेगा। जैसे गीता लिख दी। वो लोग पढ़ पढ़ के बेकार हो गये। उसके बाद और कोई ज्ञान की बात लिख दी, इसे पढ़ पढ़ के लोग बेकार हो गये। लेकिन अब जो बात है, वो करने की, दिखाने की, बतलाने की नहीं रही और वही बात सोच कर के मैंने इस पर बहुत जानने की कोशिश की, मानव में कौनसे कौनसे दोष होते हैं? उसमें कौनसी, कौनसी, तकलीफ़ें होती हैं? जिसके कारण ये परमात्मा को नहीं जान पाता है। और काफ़ी उम्र तक इस पर मेहनत करने पर एक दिन सहज में ही मैंने सोचा कि सहस्रार के खोलने से ही सब ठीक हो जायेगा और उसी प्रकार ये सहजयोग हमारा प्रस्थापित हुआ। अब इसको जान लेना चाहिये संक्षिप्त में, कि ये जीवंत प्रक्रिया हमारे अन्दर है। जीवंत! जैसे कि हम एक अमिबा से इन्सान बने हैं। उसी तरह से आज इन्सान से हमें अतिमानव बनना है और वो भी एक जीवंत क्रिया है। उसमें कोई भी नकलियत नहीं है कि जो शब्दजाल से हो जायें, खुद पर खड़े होने पर जायें, कपड़े बदलने से हो जायें या बाह्य की चीज़ें छोड़ने से हो जायें। ये तो अन्दर की प्रक्रिया है।

जैसे बीज आप उगाना चाहते हैं। उसमें अगर अंकुर आना है, तो उसे आपको माँ के हृदय में डालना होगा। उसको पृथ्वी के पेट में डालना होगा और वो अपने आप अकस्मात, सहज में ही, अंकुरित होता है। कैसे होता है? क्या आप बता सकते हैं? एक फूल फल कैसे होता है आपको पता नहीं। इसी प्रकार सहजयोग जो है, वो भी एक अद्‌भुत घटना जरूर है। लेकिन ये किस प्रकार होती है, ये हम बता सकते हैं। क्योंकि मनुष्य के जितने भी कार्य हैं, वो ज्ञात होने चाहिये और इसलिये आप जान सकते हैं कि आपके अन्दर जो कुण्डलिनी स्वरूपा शक्ति है, जो त्रिकोणाकार अस्थि में बैठी हुई है, वो जागृत होने से ही आत्मबोध होता है।

आश्चर्य की बात है कि गीता पर, गीताई लिखते वक्त में, ज्ञानेश्वरी जो है वो गीता ही पर लिखी हुई है पूर्णतया। ज्ञानेश्वर जी ने छठे अध्याय में कुण्डलिनी का बड़े जोर शोर में व्याख्यान किया हुआ है। उसको बतलाया हुआ है। समझाया हुआ है। उसका वर्णन भी बहुत सुंदर किया। बहुत ही सुंदर किया हुआ है उसका वर्णन। और उसके बाद उन्होंने ये भी बताया हुआ है, कि किस वक्त ये कुण्डलिनी का जागरण होगा। तब किस तरह से लोगों को लाभ होंगे? उसमें बहुत ही सुंदर एक चीज़ है कि 'जो जे वांछिल, तो ते लाभो', जो चाहोगे वो मिलेगा। लेकिन चाहत ही इन्सान की बदल जाती है। उसके चाहने का ढंग ही बदल जाता है। अब ये कुण्डलिनी

हमारे अन्दर स्थित है। अब कोई अगर साइंटिफिक लोग हैं, तो वो कहेंगे कि, 'साहब, ये कैसे आपने जाना?' अब हम जानते हैं। आप चाहें तो इस बात को माने या न मानें। लेकिन एक बात है, कि अगर आप साइंटिस्ट भी हैं, तो आपको अपना दिमाग खुला रखना है। ओपन माइंडेड में सोचिये। अगर आप ओपन माइंडेड नहीं हैं तो आप कभी भी साइंटिस्ट हो नहीं सकते। हमें आपके सामने कहना चाहिये, कि जिसे एक धारणा, एक हायपोथिसिस रख रहे हैं, उसको अगर हम सिद्ध कर दे, तो फिर वो तो कायदा हो ही जाता है। इसी प्रकार कुण्डलिनी भी, अगर आप गहरी चीज़ है और उस गहरी चीज़ को पाने के लिये सब से पहले अपने दिमाग को खुला रखिये। पहले से ही आ डंडा ले कर खड़े हो जाईयेगा, तो हम आपको क्या बतायेंगे? मैंने ये देखा हुआ है, कि जिस दिन परमात्मा के साम्राज्य में ऐसे कार्य होते हैं। देखिये अगर आप कॉलेज जा रहे हैं, युनिवर्सिटी जा रहे हैं, आप ॲडमिशन के लिये कितनी कोशिश करते हैं। क्या क्या दुनिया भर आफ़तें कर कर के ॲडमिशन कराते हैं। ॲडमिशन लेते हैं और अपने गुरुजनों के सामने गर्दन झुका के बैठते हैं, वो जो भी कहे वो प्रमाण होगा। लेकिन मैंने देखा है कि संसार में जितने बड़े बड़े साधु-संत आये उनको तो हम लोगों ने सताया हैं। उनको तकलीफ़ दीं। उनकी कोई बात नहीं की और उनको परेशान करते गये और हर समय उनसे चर्चा और वाद-विवाद कर के उनको परेशान किया। इस तरह से आप ज्ञान को प्राप्त नहीं कर सकते।

ज्ञान के लिये सब से पहली चीज़ है कि, 'मैंने अभी तक जाना नहीं। मुझे आगे जानने का है। इसके उपर सब बड़े बड़े शास्त्रों ने, सब बड़े बड़े साधुओं ने लिखा हुआ है। रामदास स्वामी को आप देखिये। उन्होंने साफ़ लिख दिया कि, पढ़ पढ़ कर के कुछ नहीं होने वाला। हमारे कबीरदास जी ने तो साफ़ लिख दिया कि, 'पढ़ी पढ़ी पंडित, मूरख भय'। साफ़ साफ़ लिख दिया उन्होंने। और कितनी ही बातें उन साधु-संतों ने साफ़ लिखी हुई हैं कि बड़ा आश्चर्य होता है कि हम उनको ही पढ़ के, उन्होंने जिस चीज़ को मना किया है, वही कैसे करें? अब उसका कारण मैं आपको बताऊंगी कि क्यों ऐसा हो जाता है और इसके कारण कैसे हमारा जो धर्म है, वो किसी तरह से अधर्म में ही परिवर्तित हो जाता है।

अब कुण्डलिनी शक्ति जो है, ये है शुद्ध इच्छा। ये है शुद्ध इच्छा, माने बाकी जितनी भी इच्छा है, अशुद्ध है। क्योंकि अगर वो अशुद्ध नहीं होती तो एक चीज़ मिलने पर दुसरी चीज़ ढूँढने की इच्छा नहीं होती। हमारे जो इकोनोमिक्स के जो लॉज है, अर्थशास्त्र के जो लॉज है, उसके अनुसार कोई भी जरूरतें सर्वसाधारण तरीके से पूरी नहीं होती। माने ये कि इन जनरल, इट कॅनॉट बी.....। इसका मतलब ये है कि आपको एक चीज़ मिल जायेगी, पर्टिक्युलर, लेकिन अगर वो चीज़ मिलने के बाद आप चाहेंगे की दूसरी चीज़ मिलें फिर तीसरी चीज़ मिलें, इसकी वजह ये है, कि आपके अन्दर शुद्ध इच्छा नहीं है। जिस इच्छा की आप बहुत कोशिश करते हैं, वो पूरी हो जायें, वो इच्छा शुद्ध नहीं, वो अशुद्ध इच्छा है। जो शुद्ध इच्छा की जो शक्ति है वो ये कुण्डलिनी है। जिसमें सारा अपना ये पिंड बनाया और उसके बाद वैसे के वैसे ही बैठी हुई। क्योंकि वो अभी तक जागृत ही नहीं हुई। हमारे अन्दर उसका पूरी तरह से प्रादुर्भाव नहीं हुआ है। उसका मैन्यूफेस्टेशन नहीं हुआ है कि वो अपना असर दिखाये। यही शुद्ध इच्छा हमारे त्रिकोणाकार अस्थि में बैठी हुई, जिसे हम लोग कुण्डलिनी इसलिये कहते हैं, क्योंकि ये साढ़े तीन कुण्डलों में बैठी है। अब वो साढ़े तीन कुण्डलों में बैठी, उसका क्या गणित है वगैरा इसके लिये आज इतना समय नहीं है।

लेकिन आप अगर मेरे लेक्चर्स सुनें तो उसमें मैंने विशद रूप से समझाया हुआ है।

अब ये कुण्डलिनी शक्ति है शुद्ध इच्छा! तो सर्वप्रथम शुद्ध इच्छा जो है, वो हमारे अन्दर जब उठती है, तो हम क्या देखते हैं, कि हमारे अन्दर चक्रों से गुजरते वक्त वो चक्रों से अपने को अलिप्त रखते वक्त पूरी तरह से उसको प्लावित करती है और यही तार्किक दृष्टी से देखा जाय तो सही बात है कि जब एक पेड़ के अन्दर, उसके अन्दर का रस उसका जब उठता है, तब वो एक जगह कहीं चिपक जाय और किसी भी एक चीज़ में खत्म हो जाये तब पेड़ भी खत्म हो जायेगा और वो चीज़ भी खत्म हो जायेगी। इसी तरह से जब ये कुण्डलिनी हमारे अन्दर जागृत होती है और बढ़ने लग जाती है, तो ये शुद्ध इच्छा, बाकी की जो इच्छायें हैं उनको दूर हटा दी जाती है। लेकिन इसके बिल्कुल उल्टा हमारा कार्यक्रम रहा, कि जब हम धर्म की ओर मुडेंगे। पहले तो हम जब धर्म की ओर मुड़ते हैं, या किसी भी चीज़ की ओर मुड़ते हैं, तो पहले हमारा उनसे शारीरिक रिश्ता जुड़ जाता है। हम लोग ये देखते हैं कि शारीरिक या जड़ चीज़ें क्या मिल सकती है? ये देखते हैं कि जैसे ही घर में लोग आ जाते हैं, तो पहले देखते हैं कि अपने कितने इससे फायदे हो सकते हैं। इसमें क्या क्या हम कर सकते हैं। यहाँ तक की लोग सोचते हैं, कि इससे अच्छा हो कि हम उन लोगों का पैसा ही मार लें, रूपया मार लें, ये कर लें, वो कर लें और फिर धीरे धीरे उसकी ऐसी चीज़ें बनती जाती हैं, जो बिल्कुल बुरी और .... है। शरीर की ओर चित्त जाता है। मनुष्य का जब शरीर की ओर चित्त जाता है, तो शुद्ध इच्छा में नहीं। सीधा हिसाब है। फिर शरीर के कपड़े बदलिये, नाम बदलिये, दुनिया भर की चीज़ें करिये। इससे धर्म नहीं स्थापित हो सकता। इसलिये मनुष्य बहकता चला गया।

फिर मनुष्य की जो दूसरी पकड़ आती है, जो कि जबरदस्त है, वो है मानसिक माने बुद्धि पर। इसमें बड़े बड़े वितंडवादी हो गये। आप जानते हैं, कि एक बड़े भारी ऐसे ही बुद्धिवादी ने इतना आदि शंकराचार्य को सताया था। हमेशा ये बुद्धिवादी लोग अपनी चिपक को नहीं समझते हैं। इनको चिपक होती है जो उन्होंने पढ़ लिया। अगर किसी आदमी ने गीता पढ़ ली, तो वो सोचता है कि, मैं तो व्यास मुनि हो गया, कम से कम। इससे ज्यादा नहीं हुआ तो कम से कम व्यास मुनि तो हो ही गया हूँ। किसी ने अगर बाइबल पढ़ लिया तो वो सोचता है कि ईसामसीह से ज्यादा वो जानता है। ये जो बौद्धिक पकड़ हमारे अन्दर आ जाती है, उससे और भी प्रश्न खड़े हो जाते हैं। सारा ईसाई धर्म जो है आज इस बौद्धिक पकड़ की वजह से खत्म हो चुका है। आप देख लीजिये कि बौद्धिक पकड़ इनमें किस प्रकार आयी है। जिस वक्त में ईसामसीह इस दुनिया में आये तो उन्होने यही कहा था कि अपना पुनर्जन्म करो। तब .....(अस्पष्ट) ने कहा कि, 'क्या मैं अपने माँ के गर्भ से प्रवेश करूँ?' उन्होंने कहा कि 'नहीं। जो गर्भ से पैदा होता है वो तो जड़ ही है। लेकिन जो आत्मा से, जो आदिशक्ति से पैदा होगा, वही आत्मा है।' और आत्मा की पकड़ आये बगैर आप परमात्मा को नहीं जान सकते। लेकिन इन लोगों ने ये सोचा की ये तो कुछ समझ में नहीं आयी बात। क्योंकि इनमें से किसी को भी साक्षात्कार देना नहीं आता था। बहरहाल नहीं भी आता था, तो भी इसका इतना बुद्धि का झमेला बनाने की कोई जरूरत नहीं थी।

उसने बुद्धि का ऐसा झमेला बनाया की एक सेंट पॉल कर के इन्सान, जो कि ईसा से कुछ उसका संबंध नहीं था। उसने ईसा को देखा नहीं था और वो खुद ऐसे बीमार रहते थे और कुछ सुप्राकॉन्शस तकलीफ़ें थीं वो साहब बाइबल में आ के बैठ गये। उस वक्त मैंने पहले बाइबल उठाया, मैंने कहा, 'ये महाशय है कौन?' मैंने ही नहीं,

खलिल जिब्रान ने, कितने ही लोगों ने, आप जानते होंगे कि विल्यम ब्लैक एक बड़े भारी द्रष्टा हो गये और इन्होंने तक कहा है कि, 'ये इन्सान बाइबल में क्यों बैठा हुआ है?' और इसको बाइबल में बिठा कर के, उसने जो भी बाइबल में लिखा वो इन लोगों ने मान्य कर लिया। अब उसकी हालत यहाँ पर आ गयी है कि जिस वक्त में एक बुद्धिवादी महाशय जी ने बाइबल को जाना, तो देखा, कि पॉल ने ईसा के जन्म के बारे में कुछ लिखा ही नहीं। उनकी माँ के बारे में कुछ लिखा ही नहीं था। उन्होने जो चमत्कार किये उसके बारे में कुछ लिखा ही नहीं था। तो उन्होने कहा कि, 'नहीं ये तो उनके जो शिष्य थे वो तो फिशरमैन थे। ये मछलियाँ पकड़ते थे। मछलियाँ मारते थे। उनको तो अकल ही नहीं थी।' उन्होंने अपने ही दिमाग से निकाल के ये बात की। और इस बात को बिशप ऑफ कैन्टबरीज जो है, आज बिशप ऑफ कैन्टबरीज, उसको भी सहायता देनी पड़ी। उसको भी कहना पड़ा, 'हाँ, ये ठीक है। या तो अब आप पॉल को मानिये या ईसा को मानिये।' उन्होंने कह दिया, 'हाँ, यही बात ठीक है।' तो ईसा जो पैदा हुये थे वो भी गलत बात और उनके जो चमत्कार हुये थे वो भी गलत बात है। पॉल साहब जो है वो सही हो गये। क्योंकि इसी पॉल ने बाद में आगे अगस्टीन का जन्म लिया। और उसने आ कर के सारा ऐसा एक बौद्धिक, तार्किक एक ईसाई धर्म बना दिया, कि चाहे कुछ हो, हाथ में बंदूक क्यों न लेनी पड़े, सब को ईसाई बना कर रहेंगे। ईसाई बनने का मतलब है सहजयोगी बनना। योगी बनना।

वही बात मुसलमानों की है। मोहम्मद साहब ने जो बातें लिखी थी, उसको इतना उल्टा, घुमा, फिरा कर के, एक मुसलमान धर्म बना दिया। वही हाल हिन्दुओं का है। हिन्दुओं का हाल तो बहुत ही खराब है। क्योंकि इनमें एक ही धर्म नहीं, पचासों धर्म बन गये। मेरी तो समझ में नहीं आता है, कि हम लोग कब इस चीज़ से बाज आयेंगे? सब में पहली तो बात ये थी, कि कहा गया है, कि सब के अन्दर आत्मा का वास है। जाति-पाती कहाँ से निकाली गयी? जाति-पाती का कोई अर्थ ही नहीं। क्योंकि जाति-पाती आप के कर्म के अनुसार बनायी गयी थीं। और जब से ये जन्म के अनुसार बनायी गयी तब से ये गड़बड़ शुरू हो गयी। हो ही नहीं सकता है, कि ये जन्म के अनुसार होगी। क्योंकि जिन्होंने, व्यास ने गीता लिखी। व्यास कौन थे? सब जानते है कि ये एक धिमरनी के लड़के थे। और वो भी शादीशुदा रहे। क्या वो ब्राह्मण हो सकते हैं? वाल्मिकी, जिन्होंने 'वाल्मिकी रामायण' लिखा, ये कौन थे? अपने शास्त्र लिखने वाले बड़े बड़े लोग, ये कौन थे? ब्राह्मण वो ही होते हैं, जिन्होंने ब्रह्म को जाना। जिन्होंने ब्रह्म को नहीं जाना, उसे ब्राह्मण नहीं कहा जा सकता। लेकिन जन्म से हम ब्राह्मण हो गये, जो भी धंधा करें। जन्म से हो गये, सो हो गया। अब हमारे इलेक्शन्स तक जाति-पाती पर होते हैं, तो भगवान बचाये रखें इस देश को। इसका क्या हाल होने वाला है? क्योंकि आप जिस जाति में पैदा हुये, जाति, जाति माने सहज। सहज, जो आपके अन्दर सहज है। एक का भाव है जो परमात्मा को खोजता है, वो ब्राह्मण। और जो व्यापार में आनन्द को खोजता है, वो वैश्य है। इसी प्रकार सब जातियाँ बनी और उन जातियों का इतना महात्म्य बनाया गया, कि हमारे यहाँ गोरा कुम्भार हो गया। इस महाराष्ट्र में तो इतनी .... की पूरी प्रतिमा बनायी हुयी है गोरा कुम्भार बन गया। तुकाराम ने कहा, कि अच्छा होता की, 'मैं महार होता।' बार बार जातिवाद पे सारे संतों ने आघात किया है। इतना ही नहीं ज्ञानेश्वर जी को सताया गया। जो ये सब बुद्धिवादी थे, अपने को समझते थे, कि ये बड़े भगवान के ठेकेदार और धर्म के ठेकेदार हैं, उनको छल छल के मारा। आज उन्हीं की ज्ञानेश्वरी लिख रहे हैं। उन्हीं की पूजा

कर रहे हैं। ज्ञानेश्वर जी का मन्दिर बना रहे हैं। इसकी वजह ये है कि बौद्धिक पकड़ ज्यादा जरूरत थी, आत्मा की नहीं। आत्मा की पकड़ होनी चाहिये। सारे संतों ने कहा है, कि अपने आत्मा को पहचानो। नामदेव, जो इतने बड़े भारी यहाँ के कवि हो गये हैं, इतने पहुँचे हुये पुरुष थे। उन्होंने बहुत सुन्दर सा काव्य लिखा है, जो कि गुरु ग्रंथसाहब में भी नानक साहब ने बहुत माना और उसे लिखा हुआ है। जिसका कि मैं आपको हिन्दी में वर्णन बताऊँ, कि वो कहते हैं, कि जो आदमी परमात्मा से एकाकार हो जाता है, उसकी ऐसी दशा हो जाती है, कि जब उसका चित्त, जैसे एक छोटा बच्चा पतंग उडा रहा है। पतंग आकाश में भरारी मार के, 'भरारी' मराठी शब्द ही लिया उन्होंने, भरारी मार कर के घूम रही है, और ये बच्चा जो है औरों से बात कर रहा है। खेल रहा है, आगे-पीछे दौड़ रहा है। लेकिन उस वक्त उसका चित्त उस पतंग पर है। दूसरी बात उन्होंने ये कही कि, जिस वक्त औरतें पानी भर के आ रही हैं और जल्दी जल्दी चल रही है। आपस में बोल रही है और गगरी सर पे रखी हुई है। और आपस में हँसी, मज़ाक सब हो रहा है, लेकिन चित्त उनका उस गागर पे है। इसे समझ ने की बात ये है कि जो लोग धर्म की बात करते हैं सब से पहले उनको चाहिये कि वो आत्मा का साक्षात्कार पायें। नहीं तो उनको कोई अधिकार नहीं की वो आत्मा का साक्षात्कार पायें और कोई अधिकार नहीं की वो कहें कि हम आत्मसाक्षात्कारी हैं। वो अपने को कहे भले की हम बहुत उँचे हैं और अपना सेल्फ सर्टिफिकेट दे, कि लेकिन उसकी पहचान ये है कि वो जो आदमी आत्मसाक्षात्कारी होता है, वो, उसके अन्दर सामूहिक चेतना आनी चाहिये। उसके अन्दर कलेक्टिव कॉन्शस आना चाहिये। अगर उसके अन्दर वो सामूहिक चेतना नहीं आयी, तो वो कितना भी अपने को सेल्फ सर्टिफिकेट करे, लेकिन वो आत्मसाक्षात्कारी नहीं है और ये बड़ी जरूरी चीज़ है कि धर्म को पालने वाले, धर्म को सम्भालने वाले आत्मसाक्षात्कारी होने चाहिये। धर्म पे चर्चा करना भी उन्हीं को अधिकार है। उन्होंने अभी तक उस प्रकाश को पाया नहीं। आत्मा के प्रकाश को पाया ही नहीं। वो क्या उसकी बात करेंगे, जो अंधेरे में खड़े हुये हैं? अंधेरे की ही चर्चा होगी। एक अंधा आदमी क्या बतायेगा की कौनसे रंग हैं? कौनसी कला यहाँ पड़ी हुई है? इसलिये पहले अपनी आँख खोलनी चाहिये और वो आँख सिर्फ आत्मा के ही दृष्टि से जाना जाता है। आत्मा आत्मा से ही तुष्ट है।

तीसरी पकड़ और भी बेकार, बहुत ही बेकार है। जिसमें की मनुष्य अपनी भावना से किसी को चिपक जाता है। अब भावना उनको है। जिसे कभी कभी श्रद्धा समझते हैं। पर ये श्रद्धा नहीं ये अंधभक्ति है। अंधभक्ति से लोग चलते हैं। अंधभक्ति माने ऐसी कि जिस वक्त में ईसामसीह आये, तो लोगों ने कहा कि, 'हम तो भाई मोझेस को मानते हैं। क्योंकि मोझेस तो मर गये थे। अब हम मोझेस को .....अब हम ईसामसीह को मानते नहीं। जैसे, जो लोग थे जिन्होंने कहा हम ईसामसीह को नहीं मानते, हम तो सिर्फ मोझेस को मानते हैं। अब उस वक्त मोझेस तो वहाँ थे नहीं और इसलिये 'मोझेस ने कहा था कि, हम को सफर करना चाहिये। तो हम तो सफर करेंगे।' हालांकि ईसामसीह के आने से हमारी सारी तकलीफ़ें ही खत्म होने वाली थी। लेकिन उनका, 'नहीं, हम तो सफर करेंगे।' तो ठीक है, आप के लिये हिटलर आ गया। तो सफ़र करिये। यही एक उनका बेसिक डिफरन्स था, कि हमें सफर करना चाहिये। अब सफर क्या परमात्मा के लिये आपको चार बातें सिखायी गयी हैं, कि आपको हाल, अपेष्टा, दु:ख और यातनायें उठानी पड़ेगी। अरे, जिस परमेश्वर ने आपको ये मनुष्य का देह दिया है, उसे कोई आपको तकलीफ़ दे कर के, परेशान कर के किया है? आपके माँ ने भी आपको जन्म दिया तो सारा कष्ट तो अपने ही उपर उठाया है। कोई आपको तो कष्ट नहीं दिया था?

फिर ऐसी बातें लाना, हमारे महाराष्ट्र में तो खास ये है, कि आज सोमवार है तो उपवास है, कल मंगलवार है तो उपवास है। कल बुधवार है तो उपवास है और फलाना है तो उपवास है। पहले अपने देश में ऐसे ही लोग उपवास के बहुत हैं तो क्यों उपवास करें? लेकिन उपवास करने की इतनी बीमारी हमारे देश में है और वो भी उन दिनों में करेंगे, जिस दिन कि हमारे किसी बड़े, महान अवतारों का जन्म हुआ। जैसे हमारे यहाँ संकष्टी मानते हैं, जो गणेश जी का जन्म हुआ है। उस दिन उपवास करेंगे। अगर आपके घर बच्चा पैदा हुआ, तो उस दिन क्या उपवास करेंगे? सूतक करेंगे या मिठाई बाटेंगे? सब उल्टी बात कर दी कि 'भावनावश हो कर के, अपने को दु:ख देने से परमात्मा मिलते हैं। अपने को यातना देने से परमात्मा मिलते हैं।' जैसे शिया लोग करते हैं। ये बड़ी गलतफ़हमी में लोग बैठे हैं। उनसे जो प्रसन्न चित्त है, उन्हीं को परमात्मा मिलते हैं। जैसे अंग्रेजी में कहा था, काऊंट युवर ब्लेसिंग वन बाय वन! जो अपनी ब्लेसिंग्ज को सोचता है, परमात्मा ने कितना दिया। उसी को परमात्मा मिलता है। जो अपने को हाल-अपेष्टा में, दु:ख में डालता है, आप ही बताईये कि किसी माँ ने अगर अपने बच्चे को देखा, कि वो अपने को भूखा मार रहा है, इससे बढ़ के माँ के लिये क्या दु:ख की बात होगी! वो कहेगी, ... बेहत्तर, मेरा बच्चा भूखा रहता है। इससे ज्यादा दु:खदायी और कोई चीज़ ही नहीं हो सकती। हाँ, अगर आपको उपवास करना है तो करिये। उसमें कोई हर्ज़ नहीं। आप अपनी तंदुरूस्ती के लिये करिये। लेकिन परमात्मा के लिये उपवास वगैरा करने की कोई जरूरत नहीं। ये एक भावना का एक कि हम बड़े दु:खी है।

दूसरी भावना ये कि हमारी बड़ी भगवान पे श्रद्धा है। जब रामायण बोलते वक्त उन्होंने कहा कि हम तो परशुराम को मानते हैं। जब कृष्ण आये तो हम राम को मानते हैं और अब, जब और कोई आयेगा तो ये होगा कि हम कृष्ण को मानते हैं। कृष्ण आपके सामने आज खड़े हैं क्या? कौन खड़ा है आपके सामने ये भी सोचना चाहिये। वर्तमान में रहने की हमारी प्रवृत्ती नहीं। किसी बाह्य, पीछे में रहना, किसी गत विचारों में रहना ये भावनानिवेश है। भावनानिवेश मतलब इस कदर पागल हो जाते हैं, कि उसी में फिर हमारे यहाँ हम देखते हैं, कि बुद्धिवादी भी और भावनिक भी, दोनों भी इसे हम कह सकते हैं कि फेनेटिक हो जाते हैं। ये फेनेटिसिजम भावना से चिपक जाता है और वो भावना इतनी जबरदस्त हो जाती है, अंध भावनायें हैं, अंध चीज़ है, जिसकी वजह से मनुष्य इतना एक चीज़ पर चिपक जाता है और उसकी शुद्ध इच्छा जो है उसी में नष्ट हो जाती है। जैसे नदी आते हुए किसी रेत में चली जाये और वहाँ लुप्त हो जाये। उसी प्रकार हमारी अन्दर की जो शुद्ध इच्छा परमात्मा से एकाकार होने की है, इसी प्रकार इस में लुप्त हो जाती है। इस तरह की अंधश्रद्धा से हमारे यहाँ बड़ा ही नुकसान हुआ है। बहुत नुकसान हो गया है। और सब से बड़ा नुकसान तो ये हुआ है, कि अब हम लोग अलग अलग हो कर बिखर गये हैं। हमारे यहाँ में कोई भी जोड़ने की व्यवस्था नहीं है। सारी ही बिखरने की, अलग हटने की, व्यवस्था हो गयी, विभक्त होने की।

लेकिन जब हमारा इवोल्यूशन होता है, आप देखिये कि हमारा जब उत्थान होता है, जब हम उँचे और उँचे स्तर पे आते हैं, तब सम्यकता आयेगी। सम्यक होना चाहिये। इंटिग्रेशन आना चाहिये। अगर अपने अन्दर इंटिग्रेशन नहीं आया तो समझना चाहिये कि हम बिखरे जा रहे हैं। अगर हमारे इंटिग्रेशन आने के लिये कुछ करना हो तो वो करना चाहिये और सब इंटिग्रेशन का एक ही सूत्र है और वो है अपना आत्मा! उसको प्राप्त होते ही

कुण्डलिनी जब आत्मा के प्रकाश में आ जाती है। तब सब चीज़ें हट कर के उसी के प्रकाश में मनुष्य देखता है, कि दुसरा भी कितना सुन्दर है। और फिर वो ये भी देखने लग जाता है सामूहिक चेतना में कि ये जो दुसरा है वो है कौन? दुसरा है कौन? जब आप उसी विराट के अंगप्रत्यंग हैं, तो दूसरा कौन है? दूसरे पे उपकार कौन सा हो रहा है? सब अपने ही है। हमारा ही हाथ, हमारे ही पैर और हमारी ही आँख है। लेकिन हम लोग जो इंतजामात करे हैं कि एक आँख पे हाथ को तोड़ दीजिये, एक हाथ पे नाक को काट दीजिये, एक हाथ पे कान काट दीजिये। और उसके बाद एक कान को पकड़ के कहिये कि साहब, हम धार्मिक हैं। वो कहे नाक को पकड़ के कि हम धार्मिक हैं। इसमें धर्म का लेश मात्र भी नहीं। गर कोई आदमी फेनेटिसिजम में पड़ता है तो जान लें कि इस में लेशमात्र भी नहीं है। जब तक आप में सम्यक ज्ञान नहीं आ सकता, वो सिर्फ आत्मा के प्रकाश से आता था। किसी ने भी, किसी भी संत-साधु ने ये नहीं कहा, कि आप आत्मा का प्रकाश न लें। वरना ऐसा आज एक भी गलती से आदमी ऐसा हो जाता तो लोग उसी का ढिंढोरा पीटते। लेकिन भगवान की ऐसी कृपा है कि कितना इन्होंने सहन किया, लेकिन हमेशा कहते रहे कि आत्मा को प्राप्त करो। आत्मा में समाओ। यही आत्मा की प्राप्ति करने के लिये, हम लोग अनेक चीज़ें करते रहे और सहजयोग में हम देखते हैं, कि अनेक तरह के लोग हर एक देश में आते हैं। यहाँ से जो कुछ चोर, उचक्के गये थे। उन लोगों ने वहाँ संन्यासी रूप धारण कर के लोगों को बेवकूफ़ वगैरे बनाया और उनको बेवकूफ़ वगैरे बना कर, उनको यहाँ तक बताया कि तुम अगर गांजा पिओगे तो तुमको भगवान मिल जायेगा। वो बेचारे गांजा पीते रहे। उनकी इतनी अंधश्रद्धा ज्यादा है, कि उनको जो भी बताईये वो करने के लिये जाते हैं। किसी ने कहा कि तुम नग्न हो जाओ तो तुमको भगवान मिल जायेगे। वो नग्न भी हो गये। इस प्रकार हर जगह आप अगर देखे, तो सिर्फ ये दिखायी देता है, कि हर तरह की जबरदस्ती और अँधे आदमी को जबरदस्ती कुँअे में ढ़कलने का प्रयोग हो रहा है और जब वो कुँआ बन गया। उसके लिये पच्चीस आदमी जुट गये तो उनके अन्दर जरूरी है, कि बड़ा ही प्रकोप हो सकता है, उसके कारण बहुत ही ज्यादा गंद आ सकता है। उसके कारण झगड़ा हो सकता है। यही नहीं तो बड़ा व्हॉयलन्स भी हो सकता है। इस तरह सब को कुँअे में धकेल दीजिये और अपना आधिपत्य बना कर बैठ गये। कि हम इस जगह के मठाधीश हैं, हम इस जगह के पोप हैं, हम इस जगह के फलाने हैं, ये हैं। याने यहाँ तक कि झेन जैसी बड़ी भारी चीज़, जो कि विदितामा ने इसे लिखी थी, जो कि बहुत ही उँची चीज़ है और बड़े उँचे सतह पर वो बात करता था। लेकिन उसके जो मुख्य हैं उनको मैंने देखा कि उनकी कुण्डलिनी तो नीचे में बैठ हुयी है। ये तो पार भी नहीं। मैंने कहा, आप झेन कैसे? झेन का मतलब ही, जो शब्द जो है उसका मतलब है, ...माने जिसने जाना। तो मैंने पूछा कि, 'आप बैठे क्यों हैं? ये कैसी बात है?' कहने लगे कि, 'हमारे यहाँ तो छब्बीस हो गये कश्यप, तब से कोई कश्यप नहीं हुआ और मैं कहाँ से हो सकता? ये तो बारहवी शताब्दि में खत्म हो गया।' छब्बीस कुल हुये। मैंने कहा, 'आप उस तख्त पे क्यों बैठे हुये हो? तख्त पे तो आप बैठे हुये हो, पर आपका अधिकार क्या है?'

उसी प्रकार वेद का हुआ। वेद में, पहले ही श्लोक में कहा है, कि जिसको विद् हो जाये उसको वेद का अधिकार है। जिसको विद् नहीं, जो विद् नहीं, उसे जाना नहीं है। उसको वेद् क्या करेगा? अब विद् होना माने क्या? विद् माने अपने अन्दर जो चेतना है उसमें उसे जानना। याने अंग्रेजी में कहा जायें तो इसे अपने सेंट्रल नर्व्हस सिस्टम में हमें अपने आत्मा को जानना चाहिये। अगर हम अपने सेंट्रल नर्व्हस सिस्टम पर उसे नहीं जानते हैं तो ये

हमें विद् नहीं हैं। क्योंकि जो भी कुछ हमने अपने उत्क्रांति में, अपने इवोल्यूशन में पाया है, वो सब अपने सेंट्रल नर्वस सिस्टीम में मानते हैं। आत्मा की प्राप्ति से कितने लाभ होते हैं! अनेक अनंत हैं। उसको मैं बता नहीं सकती हूँ। लेकिन कल कुछ मैं बताऊंगी मैं इसके मामले में आपको कि इससे कितने लाभ होते हैं। क्योंकि मनुष्य पहले लाभ ही देखता है। ये बात माँ को जानना चाहिये कि अपने बच्चे पहले चॉकलेट खाते हैं। इसके पहले लाभ कराओ और उसको समझाओ कि ऐसे ही आगे बढ़ते बढ़ते तुम दुसरों का भी लाभ करा सकते हो। जब दूसरों का भला होता है, जब दूसरों का अच्छा होता है तब जा कर के आपको असल में पता होता है, कि सहजयोग से हमने क्या प्राप्त किया! तब तक तो आपको लगता है कि 'मैं स्वार्थी हूँ। अपने ही लिये हूँ। मैं अपने ही को देखता हूँ। लेकिन मैं दूसरों के लिये कुछ नहीं करता।' जब आप दूसरों को देने लग जाते हैं, तब इसका असली मजा आने लग जाता है। हमारे यहाँ अनेक वाद-विवाद हैं। हर एक बड़े बड़े अवतरणों के वाद-विवाद लोगों ने खड़े कर दिये हैं। लेकिन उसकी असलियत को कोई नहीं जानता। जैसे कि गीता में हो सकता है कि उन्होंने कुण्डलिनी का उल्लेख नहीं किया क्योंकि समय नहीं था कुण्डलिनी की बात करने की। लेकिन उन्होंने साफ़ कह दिया कि 'योगक्षेमं वहाम्यहम्', पहले योग करो, फिर क्षेम करेंगे।

ऐसी संस्था अपने देश में अनादि काल से है, जो योग प्रदान करती रही। यहाँ पर महाराष्ट्र में नाथसंप्रदाय जो था, उसने योग की संपदा लोगों को दी। लेकिन एक-दो आदमी उस वक्त में पार होते थे, एक-दो। आपको मालूम है, राजा जनक के समय में एक ही नचिकेत को उन्होंने पार किया था। वो भी बहुत परीक्षा के बाद और यहाँ भी कुछ गुरु ऐसे अभी भी हैं जो कि ये कार्य कर सकते हैं। पर एक ही दो इसको करते थे, क्योंकि तब हमारा जो वृक्ष था, धर्म का वृक्ष था, उसकी शुरूआत उस वक्त एक ही दो उसमें फूल लगते थे। लेकिन जहाँ जहाँ ऐसे महान लोग हुये उनका विपर्यास कर के उनसे गलत धारणा ले कर के हमने अपनी अपनी संस्थायें बनायी। जिसमें या तो शारीरिक, मानसिक या बौद्धिक पकड़ थी और धर्म था नहीं। क्योंकि धर्म जो है, आदमी में बैलन्स होता है। उससे आदमी में बैलन्स आना चाहिये। उसके अन्दर संतुलन आना चाहिये। अगर मनुष्य के अन्दर संतुलन नहीं आया तो वो धार्मिक नहीं है। वो असंतुलन में चला गया, वो बेकार है। धर्म सिर्फ संतुलन के लिये दिया। क्योंकि अगर आपका उद्धार होना है, आपका अगर असेंट होना है, तो आपमें सब से पहले बैलन्स आना चाहिये। लेकिन घर में ही लोग जड़े रहेंगे नहीं, अगर उनमें पूरा बैलन्स आ जायेगा, उनका उद्धार वो करेंगे ही। लेकिन हम अपना बैलन्स नहीं देखते। हमारे अन्दर कोई भी बैलन्स नहीं आ पाता है। क्योंकि हम तार्किक धर्म में रहते हैं या किसी अंधश्रद्धा में रहते हैं या किसी शारीरिक पूजा में लगे रहते हैं। उससे धर्म अन्दर नहीं आता। सब से पहले ये है कि हम अपने को बैलन्स करें। अपने में देखें कि हम बैलन्स है? और आप अपने को बैलन्स करना चाहते हैं, जिस वक्त कि आप सोचते हैं कि संतुलन में रहें, किसी भी एक्स्ट्रीम पे नहीं जायें, तो सहज में आपके अन्दर सुबुद्धि, जिसे हम विज्डम कहते हैं वो आ जायें।

और सब से बड़ी बात हमारे लिये इस भारत वर्ष में ये है, कि यहाँ की भूमि स्वयं एक योगभूमि है। बहुत पवित्र भूमि है। आप यहाँ पैदा हुये ये कितनी महान बात है! इसे आप जानते नहीं। एक बार मैं लंडन से आ रही थी। रास्ते में जैसे ही इस पवित्र भूमि को हमने पार किया, मैंने हमारे हज़बंड से कहा कि, 'साहब, यहाँ पर देखिये हम

हिन्दुस्तान छू गये।' उन्होंने कहा, 'कैसे पता?' मैंने कहा, 'आप जा के पूछिये।' तो पायलट ने कहा कि, 'अभी एक मिनट पहले हमने हिन्दुस्तान का किनारा छूआ।' क्योंकि चारों तरफ़ चैतन्य की लहरियाँ मुझे दिखायी देती थी। ये इसी भारत वर्ष में। और महाराष्ट्र की तो क्या बात कही जायें कि महाराष्ट्र के अन्दर जब रामचन्द्र जी आये थे, तब भी वो पैर से जूते उतार कर के इस पवित्र भूमी पर चले थे। इस पवित्र भूमि ने अनेक संत-साधूओं को जन्म दिया। लेकिन इसका भी पाखण्ड बना कर के हमने बहुत सारा बनाया हुआ है। हर घर में उन्होंने कहा, आपको गुरु होना चाहिये। गुरु होने का मतलब है, जेल से छूटा। उसने काषाय वस्त्र पहन लिया, हो गये वो गुरु। सद्गुरु होना और कहा है, जो आपको परमात्मा से मिलाये वही सद्गुरु है। हर आदमी गुरु बना बैठा रहता है! उसकी शकल में भी दिखायी नहीं देता है कि ये गुरु है। ऐसी शकल से आप एक एक झुर्रियाँ गिन लीजिये। उसकी शकल ऐसी की मरा जा रहा है, उसको खुद ही बीमारियाँ हो रही है। अगर ये नहीं है, तो दूसरे तरह का जो फूल कर के इस तरह से हो गया है, जो दूसरों का पैसा लूटता है और उनको गंदी बातें सिखाता है। अधम की बातें सिखाता है। ऐसे लोग अच्छा है, कि बहुत आजकल अमेरिका चले गये। वहीं वो पनपे। इस भारत वर्ष में ऐसे लोग नहीं पनप पायेंगे। थोड़े दिन चलेंगे। फिर उनको जाना पड़ेगा ही। यहाँ चल नहीं पायेंगे।

दूसरी बात बहुत बड़ी हमारे लिये भाग्य की है, कि हमारी भारतीय संस्कृति अत्यंत महान संस्कृति है। क्योंकि ये हमेशा परमात्मा की ओर दृष्टि है। हम छोटे थे, तब हमारी माँ हमेशा कहती थी कि, 'लक्ष कुठेय?' तुम्हारा चित्त कहाँ है? चित्त कहाँ हैं? चित्त का निरोध करना ये हमारे शास्त्र में, हमारे धर्म में, हमारी संस्कृति में बचपन से सिखाया जाता है कि चित्त को रोको और परदेश की जितनी भी संस्कृति है, आप विश्वास माने सब इन्सान को धीरे धीरे खत्म करने का इंतजामात है। पहले तो उसका चित्त खराब करो। उसके बाद उसका जो पावित्र्य है उसको नष्ट करो और उसके अन्दर गन्दी बातें भर के और उससे पैसा निकालो, क्योंकि जब तक आप में कुछ कमजोरियाँ नहीं होगी तो उनकी इंडस्ट्री कैसी चलेगी? ऐसी ऐसी इंडस्ट्री बनाओ जिससे कि बेकार ही में लोगों से पैसा लिया जाये। उसे ये बेवकूफ़ बनाया जाये और उनको लूटा जाये। जितना भी हो उनको लुटाया जाये। आप देख लीजिये कि साइन्स में जो आज आपने बना के रखा है, उसमें भी क्या बनाया है, तो ॲटॉमिक बॉम्ब! ये अच्छी बेवकुफ़ी है। इतनी मेहनत कर के हम लोगों ने ॲटॉमिक बॉम्ब बना दिया कि जो हमको ही डिस्ट्रॉय करें। जो हमको ही खत्म कर दे। ऐसा हमने क्यों बनाया? आखिर क्या बात है? कि हमारे अन्दर जो भी शक्ति बैठी हुयी है, जो जड़ है, जिससे आज हम आत्मा होना चाहते हैं और जड़ शक्ति जो है उसे फिर जड़ बनाना चाहती है और जड़ की तरफ़ जाना बहुत आसान है। ऊपर उठना कठिन है। कूदना नीचे बहुत आसान है। इसलिये मनुष्य जड़ की ओर बहुत जल्दी जाता है। जड़ता की ओर जाने से कैसे ऊपर आप उठ सकते हैं? पर ये हमारी भारतीय संस्कृति ही ऐसी संसार में हैं जो कि आपको ऊपर की ओर उठाती है। हर चीज़ में ऊपर की ओर उठाती है। और ऊपर की ओर उठना ही आपका लक्ष्य है। बाकी सारी जिंदगी जो है, वो शून्य है। उसमें कोई अन्त नहीं है। जो जिंदगी आपको ऊपर की ओर उठाये, ऊँचे ऊँचे तरीकों से, ऊँचे ऊँचे विचारों में उठाये वही आपके लिये असल जिंदगी है और बाकि की सारी नकल है। जिसे हमें छोड़ देना चाहिये।

सारे संत-साधुओं ने बड़ा कार्य कर दिया। लेकिन जब मेरा जन्म हुआ तो मैंने देखा कि ये लोग तो संत-

साधुओं के पीछे भी हाथ धो के पड़े हुये हैं। जैसे आज कल एक नयी बात बुद्धिवादिओं ने निकाली है, कि शंकराचार्य ने 'सौंदर्य लहरी' लिखा ही नहीं। फिर कम्युनिस्ट लोग कहते हैं कि शंकराचार्य .....। सब के पीछे लोग हाथ धो के पड़े रहे जिंदगी में। अब मरने के बाद उनके पीछे हाथ धो के पड़े हुये हैं। क्योंकि वजह ये है कि ये लोग अपने अहंकार से अभी छूटे नहीं हैं। इसलिये उनके अहंकार में चिपकी हुयी इच्छा अभी भी उनको तंग कर रही है। उस अहंकार से अपने को छुडाना चाहिये और जब आदमी उस अहंकार को छोड़ के खड़ा हो जायेगा, तब देखियेगा कि उसका .....है। इसी में उसका उत्थान है और यही उसको पाने का है। बाकी सब चीज़े जो है व्यर्थ थी। उसमें क्यों झगड़ते रहे, क्यों लड़ते रहे, क्यों वाद करते रहे? बाद में उसको जब समझ में आता है तो हे 'भगवान, इतना समय मैंने बर्बाद कर दिया!' बेकार गया।

आप सब को ये लाभ हो। आत्मा का लाभ हो। आप आत्मा को प्राप्त हो। यही मेरी शुद्ध इच्छा है और परमात्मा के कृपा से ही सब घटित हो। तो ये जानना चाहिये की अंकुर मात्र आपके अन्दर ये जागृति हुई। ये अंकुर मात्र जागृति हो। आपको चाहे तो आप नष्ट भी कर सकते हैं और चाहे तो इसका एक वृक्ष भी बना सकते हैं। लेकिन नम्रता होनी चाहिये। अपने ..... छोड़ कर के नम्रता में इसे आप बढ़ायें और समझें कि ये किस तरह से होना चाहिये। कुछ कुछ लोग तो इतने मकाम छोड़ के कहाँ से कहाँ उँची मंजिले तय कर के कहाँ तक पहुँच गये और कुछ लोग अभी भी वहीं पे बैठे हुये हैं। ये देख के आश्चर्य होता है कि सहजयोग में कैसे लोग प्रगति करते हैं और कुछ कुछ लोग वहीं पे गड़े बैठे हुये हैं। इसलिये इसका भी एक विचार रखना चाहिये कि ये प्राप्त होने के बाद हम चाहें कितनी भी बड़ी पोजिशन में हो, कितने भी रईस हो, गरीब हो, कुछ भी हो, आज हम को आत्मप्राप्ति हो गयी। हम सब एक लेवल पे आ गये। इसके बाद हमें चाहिये कि हम अपना लेवल बढ़ायें। उपर चलें। पैसे जिनके पास है, या जिनके पास पोजिशन है, या जो गरीब है सब का एक जैसा ही हाल है। कोई खास फर्क तो मुझे दिखायी नहीं देता। बस, बेहतर ये है कि आप इस सतह पर आ जायें और आत्मा को प्राप्त करें। उसके बगैर अपने देश की गरीबी भी नहीं जा सकती है और ये ब्लॅक मार्केट नहीं जा सकता है। इसके सिवाय यहाँ के जो कुछ ॲडमिनिस्ट्रेशन की खराबियाँ हैं वो नहीं जा सकती है और जितनी अराजकता है, जो खराबियाँ हैं, सब कुछ इसी से मिट सकती हैं। और कोई तरीका नहीं है कि मनुष्य का उत्थान करना चाहिये। आखिर मनुष्य ही तो सब कर रहा है।

अगर मनुष्य ठीक हो जाये, उसकी आत्मा जागृत हो जाये और इस परमात्मा के प्रेम को वो जान जाये, तब आप देखिये कि कितना फर्क आ जायेगा। कितना सारे देश में फर्क आ जायेगा। लेकिन यहाँ एक ही रोना है कि कितने लोग ये चाहते हैं। वो लोग तो सोचते हैं कि अभी थोड़ी सी जिंदगी है बना लो, जो कुछ करना है कर लो। जिंदगी बहुत लंबी है ये अमर जिंदगी को पाईये। ..... की जिंदगी में रहने से कोई भी फर्क नहीं पड़ने वाला। इसलिये सभी लोगों को मैं बहुत बिनती कर के कहती हूँ, मैं एक माँ हूँ और मैं सोचती हूँ कि मेरी आर्तता ये है किसी तरह से भी आप लोग इस चीज़ को समझें, कि अब समय आ गया है उत्थान का। ये आखरी जो हमारे इवोल्यूशन का। जो आखरी जंप है। इसमें की हम अपने सामूहिक चेतना में जागृत होते हैं। आत्मा में जागृत होते हैं। उसे प्राप्त करने का ये समय आ गया है। इसे चूकने में कोई अर्थ नहीं है और लोगों को भी इस वक्त गलतफ़हमी

में डालने से कोई अर्थ नहीं। जो हो गया सो हो गया। उसे भूल कर के अनन्त में आप उठिये। परमात्मा के साम्राज्य में आपको आना चाहिये।

सहज म्हणजे तुमच्या बरोबर जन्मलेला योग जो मार्ग आहे, तो सहजयोग आहे. तो फक्त मानवालाच उपलब्ध आहे. जनावराला नाही. कशालाच नाही. फक्त आपल्यालाच उपलब्ध आहे. पण तो काय आहे? त्याच्यासाठी सबंध सांगायचं म्हणजे ह्या भाषणात होऊ शकत नाही. पण मी आता आपल्याला थोडक्यात सांगितलं आहे. पण पुस्तकं आहेत ती बघा. लहान लहान पुस्तक आहेत. पहिल्यांदा ज्या लोकांनी काही साध्य केलेले नाही त्यांच्यासाठीसुद्धा पुस्तकं आहेत. ती आधी वाचून घ्या. त्याच्यानंतर साध्य झाल्यावर दुसरी पुस्तकं मिळतील. आम्ही सगळ्यांना सगळी पुस्तकं देत नसतो. तेव्हा ते पुस्तक घेऊन आपण बघा म्हणजे कळेल, सहजयोग म्हणजे काय? आणि उद्या मी सगळं सांगणार आहे आणि लाभ काय होतात?

(मराठी में)

आता आपण एक प्रश्न विचारला, योग आणि ज्ञान ह्याच्यात काय फरक आहे?

आता पहिल्यांदा ध्यान आणि योग सांगते. मराठीत सांगू का?

मराठी लोग हो तो मराठी में बोलो तब उनको मजा आता है। और ऐसे भी मराठी भाषा बहुत अच्छी है। बड़ी प्रगल्भ है, इस विषय के लिये। बहुत प्रगल्भ भाषा है। इस विषय पे काफ़ी लिखा गया मेरे ख्याल से। किसी भाषा में इतना नहीं लिखा गया कुण्डलिनी के बारे में, जितना मराठी भाषा में लिखा गया है।

आता योग म्हणजे आपला आत्म्याचा संबंध परमात्म्याशी होणं. ही पुढची दशा. पहिल्यांदा आपल्या चित्तामध्ये आत्म्याचा प्रकाश येणे ही पहिली दशा. आणि थोडक्यात सांगायचं म्हणजे कुंडलिनीचा संबंध आत्म्याशी होणं, म्हणजेच योग घटित झाला. सुरुवात झाली. कुंडलिनीचं जागरण झालं म्हणजे जसं एखाद्या बी ला कोंब फुटावं, तशी जीवितावस्था तिला आली आणि ती जाऊन एकदा आत्म्याला भिडली आणि ब्रह्मरंध्र तिने भेदन केलं, म्हणजे ह्या ठिकाणी सदाशिवाचं स्थान आहे, आणि सदाशिवाचं प्रतिबिंब आपल्या हृदयामध्ये आत्मास्वरूप आहे. त्या आत्मास्वरूपाला जाऊन भिडलं, म्हणजे योग सुरू झाला. सुरुवात झाली. योगाला सुरुवात झाली. म्हणजे असं आहे, की त्याचा दिवा लावायचा. दिवा लावतांना पहिल्यांदा आपण वात बघतो. लावली. आधी आपण कंदिल स्वच्छ करतो आणि मग दिवा लावतो. हा सहजयोग असा आहे, की आधी कंदिल वगैरे स्वच्छ करू नका. आधी दिवा लावून घ्या. दिवा लावल्यावर हळू हळू कंदिल दिसू लागतो की किती घाणेरडा आहे. तुम्हीच तुमचे गुरु होऊन तुमचा कंदिल स्वच्छ करा. असा हा सहजयोग आहे आपला.

तर हा झाला योग. आणि योगामुळे जो प्रकाश पडतो ते ज्ञान आहे. आणि प्रकाश पडतो तो आपल्या सेंट्रल नर्व्हस सिस्टीमवर. जो प्रकाश आपल्यामध्ये पडतो तो सेंट्रल नर्व्हस सिस्टीमवर पडतो. आणि तो सेंट्रल नर्व्हस सिस्टीमवर पडणारा प्रकाश आहे, त्याला आपण म्हणू या, ज्ञान. ज्ञान असं म्हणतात. पण 'ज्ञ' म्हणजे जाणणे. त्याला बोध, त्याला तुम्ही ज्ञान म्हणता, पण मी म्हणेन बोध. त्याने बोध होतो. कारण ज्ञान शब्द आपण किती ठिकाणी वापरतो. एक शब्द ज्ञान आपण अनेक ठिकाणी वापरतो. त्यामुळे घोटाळा होतो. ज्ञान म्हणजे संस्कृतचं

ज्ञान असलं, सायन्सचं ज्ञान असलं, हे सगळं ज्ञानात येतं. पण त्यावेळेला आत्मबोध होतो. आत्मबोध झाल्यामुळे जे ज्ञान आपल्या नसानसातून वाहतं, ते खरं ज्ञान आहे. त्याला विद् होणे असं म्हणतात. पण कितीही शब्द जरी पूर्वजांनी वापरले, तरी ते आपण उलट्या गोष्टींसाठी वापरतो. विशेष करून इंग्लिश भाषा म्हणजे अत्यंत दिव्य आहे. त्याच्यामध्ये आत्म्याला शब्द स्पिरीट आहे, दारूला स्पिरीट आहे, भूतालाही स्पिरीट आहे. तेव्हा आपल्या मराठी भाषेमध्येसुद्धा असे वेगवेगळे शब्द करायला पाहिजे तितके नाही. पण आपण जे म्हणू, आत्मबोध होणे. बोध, बोध शब्द छान आहे. ज्याने बोध होतो. म्हणून त्याच्यावरून बुद्ध शब्द झाला. ज्याला ह्याचा बोध झाला. बोध झाला म्हणजे आपल्या सेंट्रल नर्व्हस सिस्टीमवर, आपल्या मज्जातंतूवर त्याचा परिणाम झाला पाहिजे. मोहम्मद साहेबांनी सांगितलं, की जेव्हा तुमचं पुनरुत्थान होईल, त्यावेळेला तुमचे हात बोलतील. हात कसे बोलणार? म्हणजे तुमच्यातून चैतन्याच्या लहरी वाहू लागल्या, म्हणजे तुमच्या बोटांवर तुम्हाला कळेल, की कोणाची चक्र किती धरली? आपली चक्र किती धरली? आत्मबोध होतो. स्वत:बद्दल आणि दुसऱ्यांच्याबद्दल.

आता मेडिटेशन जे आहे ते करावं लागत नाही. मेडिटेशन होतं. मननात तुम्ही येता. मनन करायचं नसतं. आता मनन करायचं म्हणजे काय? सगळ्यांनी ..... घालायची, बसायचं. डोळे मिटायचे आणि लक्ष कुठे? लक्ष दुसरीकडे. आता इथे म्हटलं तुम्ही मेडिटेशन करा. म्हणजे लक्ष जरूरी नाही की तुमचं आतमध्ये जाईल आणि जाऊ शकत नाही. मी म्हटलं तुमचं लक्ष आतमध्ये घ्या. तर तुम्ही लक्ष कसं आतमध्ये देणार? म्हणाल, माताजी, असं कसं करायचं? प्रश्न उभा राहणार. आम्ही लक्ष आतमध्ये कसं नेणार? म्हणून ही कुंडलिनीच्या जागृतीची घटना घडते. ती घडल्याबरोबर तुमचं लक्ष आतमध्ये ओढलं जातं. आणि लक्ष आतमध्ये ओढल्याबरोबर तुम्ही त्या लक्षाच्या मार्गाने, म्हणजे लक्ष असं समजायचं की त्या कापडासारखं धरलं, त्याच्यातून असं जे कुंडलिनीचं चालते ती वरपर्यंत येईपर्यंत त्याच्यात प्रकाश कसा पसरत जातो आणि शेवटी मग तिचं भेदन झाल्यावर, त्या ठिकाणी त्या चित्ताचं भेदन झाल्यावर मग हा जो सर्वव्यापी सूक्ष्म असा परमेश्वराचा आनंदाचा सागर किंवा प्रेमाचं जे, ज्याला आपण ऋतंभरा प्रज्ञा असं म्हणतो, जे आपल्या अष्टांग योगामध्ये वर्णित केलेले आहे, ते आपल्याला सर्वप्रथम हाताला लागतं. सगळेच म्हणतात, देअर इज ऑल परवेडिंग पॉवर. कुठेय? पहिल्यांदा आपल्याला हाताला लागतं आणि आपल्याला समजतं की हे आहे. त्याच्या आधी आपले हात जड आहेत. त्यात ही सूक्ष्मता नाहीये. ती सूक्ष्मता आल्याशिवाय आपल्याला हे लाभत नाही. म्हणून मग मननात कसं जायचं? त्याच्यानंतर मग मनन कसं करायचं? ते आम्ही नंतर सांगू.